प्रकाशन की तिथि 01.08.2017

ओ३म्

एक प्रति मूल्य : रु० 4.00

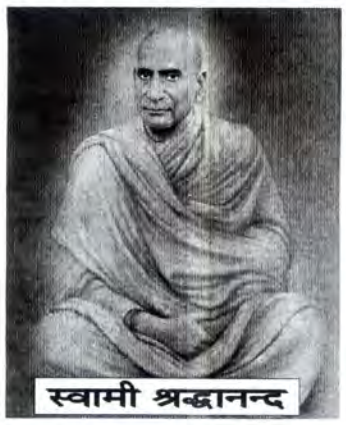
स्वामी श्रद्धानन्द

शुद्धि समाचार

सन् 1923 में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा स्थापित

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा का मासिक मुखपत्र

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः । अथर्ववेद 12.1.12
भूमि मेरी माता है और मैं उस मातृभूमि का पुत्र हूँ।

पं. मदनमोहन मालवीय

वर्ष 40 अंक 8

"शुद्धि ही हिन्दू जाति का जीवन है"

वार्षिक शुल्क : 50 रुपये
आजीवन शुल्क : 300 रुपये

अगस्त 2017 विक्रम सम्वत् 2074 श्रावण-भाद्रपद

सनातन धर्मी नेता – पं. मदनमोहन मालवीय

दूरभाष : 011-23857244

परामर्शदाता : श्री हरबंस लाल कोहली ☼ श्री चतर सिंह नागर ☼ श्री विजय गुप्त ☼ श्री सुरेन्द्र गुप्त ☼ प्रबन्धक : श्री नरेन्द्र मोहन वलेचा

'श्रावणी पर्व अविद्या के नाश तथा विद्या की वृद्धि करने का विश्व का एकमात्र मुख्य पर्व'

भारत में श्रावण मास की पूर्णिमा को श्रावणी पर्व के रूप में मनाने की प्राचीन परम्परा है। यह पर्व आर्य पर्व है जिसमें वैदिक धर्म व संस्कृति के संवर्धन व उन्नयन का रहस्य विद्यमान है। श्रावण मास वर्षा ऋतु का मास होता है। इस माह में प्रायः प्रतिदिन अथवा अधिकांश दिनों में देश के अधिकांश भागों में वर्षा होती है जिससे नदियों का जल स्तर बढ़ जाता है और अनेक स्थान बाढ़ की चपेट में आ जाते हैं। वर्षा ऋतु में सड़क मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने में बाधायें भी आती हैं। देश ने विगत एक शताब्दी में उससे पूर्व शताब्दियों की तुलना में सभी क्षेत्रों में आशातीत प्रगति की है। अब पूर्व काल के समान वर्षा ऋतु लोगों को पीड़ित नहीं करती, न कष्ट देती है। नगरों में अच्छी सड़के हैं, समृद्ध लोगों के पास कारें आदि हैं, वर्षा ऋतु में भी बसे व अन्य वाहन चलते हैं। अतः लोग वर्ष के अन्य दिनों की भांति ही कार्य करते हैं। यह बात अलग है कि पैदल व दो पहियां वाहनों वाले लोगों को आवागमन में कठिनाईयां होती हैं। अधिक वर्षा से नदियों का जल स्तर बढ़ जाने से अनेक स्थानों पर बाढ़ व जलभराव की स्थिति बनती है जिससे जन जीवन अस्त व्यस्त भी होता है। अतः आधुनिक समय में भी जहां सभी क्षेत्रों में प्रगति हुई है, वहीं जन जीवन में बाधक प्राकृतिक घटनाओं पर पूर्ण नियंत्रण नहीं पाया जा सका है। अतः प्राचीन काल में श्रावण मास में वर्षा के कारण लोग कार्यों से अवकाश रखते थे और घर में रहकर वेदों व वेद व्याख्या विषयक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर आध्यात्मिक व अन्य विषयों का अपना ज्ञान बढ़ाते थे। प्राचीन काल में आज की तरह सभी ग्रन्थ मुद्रित रूप में सबको सुलभ नहीं थे। अतः लोग निकटवर्ती आश्रमों में जाकर रहते थे और वहां रहने वाले वेदज्ञ विद्वानों से जीवन के उत्थान से संबंधित उपदेशों का श्रवण करते थे। ऐसा करने से ही श्रावण मास व इसकी पूर्णिमा के दिन मनाए जाने वाला श्रावणी-पर्व सार्थक होता था। समय के साथ-साथ लोगों में आलस्य व प्रमाद बढ़ने के कारण हमारे ब्राह्मणों व इतर वर्णों में वेदों के अध्ययन के प्रति रूचि कम होती गई और श्रावण मास के स्वाध्याय पर्व का स्वरूप विकृत होकर रक्षा बन्धन पर्व इसका रूप बन गया। इस पर्व का रक्षा बन्धन रूप भी इस दृष्टि से सार्थक होता है कि हम ऋषियों व वेदज्ञ योगियों के आश्रमों में जाकर, उनसे ज्ञान प्राप्त कर, अपने जीवन की रक्षा करें। इसके लिए वेदों का ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि विषयक यथार्थ ज्ञान व उनका आचरण आवश्यक है। ऐसा करने से अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि सम्भव होती है। प्राचीन काल में चातुर्मास वा श्रावण मास में वेदाध्ययन व वेदों के स्वाध्याय का कुछ ऐसा ही स्वरूप प्रतीत होता है। कालान्तर में श्रावणी पर्व का यह स्वरूप भी नहीं रहा और इसका विकृत रूप बहिनों द्वारा अपने भाईयों व राजस्थान के वीर राजपूतों की कलाईयों पर रक्षा सूत्र बांधने ने ले लिया जिससे आवश्यकता पड़ने पर वह उनकी रक्षा कर सकें। इसका एक कारण यही प्रतीत होता है कि मुस्लिम शासन काल में जब नारियों पर अत्याचार व उनके अपमान की घटनायें होने लगीं तो बहिने अपने भाईयों व समाज के वीर पुरुषों को भाई बनाकर उन्हें रक्षा सूत्र बांधती थी। अतः अतीत में इस पर्व के अवसर पर वेदों के स्वाध्याय सहित अनेक परम्परायें जुड़ गईं और समय के साथ रक्षा बन्धन आदि का स्वरूप बदलने से वर्तमान परिस्थितियों में इसकी उपयोगिता भी कम व नगण्य सी रह गई है। जहां तक वेदों के स्वाध्याय व उसके अनुरूप आचरण का प्रश्न है, वह जितना पहले कभी उपयोगी था उतना ही आज भी है और आगे भी रहेगा।

हमारे सभी सम्माननीय पाठकों को रक्षाबन्धन, श्रावणी, जन्माष्टमी और स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं।

श्रावणी पर्व वेदों के स्वाध्याय का पर्व है जिसे ऋषि तर्पण नाम भी दिया जाता है। ऋषि तर्पण का अर्थ ऋषियों को सन्तुष्ट करना व उनके ऋण से उऋण होना है। ऋषियों की प्रिय वस्तु वेदों का ज्ञान है जिसकी प्राप्ति वेदोपदेश ग्रहण करने व वेदों के स्वाध्याय से होती है। वेदों की रक्षा मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के समान महत्वपूर्ण है। अतः वेदों का संवर्धन व उसका अधिकाधिक प्रचार आवश्यक व अनिवार्य है। जो गृहस्थ व व्यक्ति वेदों के ज्ञान की प्राप्ति में स्वाध्याय आदि कार्यों में लगा है वह ऋषियों का प्रिय होता है। आजकल भी देखते हैं कि विद्यालय के अध्यापक उस विद्यार्थी को पसन्द करते हैं जो अधिक अध्ययनशील, चिन्तन, मननशील व अनुशासित होता है और जिसे पाठ्यक्रम का पूर्ण व अधिकांश ज्ञान होता है। अतः ऋषियों को सन्तुष्ट करने वा उनके ऋण से उऋण होने का एकमात्र उपाय यही है कि हम उपलब्ध वेद ज्ञान को बढ़ायें, उसका अध्ययन कर उससे अलंकृत हों, दूसरों में अधिकाधिक उसका प्रचार व प्रसार करें जिससे वेदों का उपलब्ध ज्ञान अप्रवृत्त होकर नाश को प्राप्त न हो। हमने देखा है कि मध्यकाल में वेदों का ज्ञान प्रायः पूरी तरह से अप्रवृत्त हो गया था जिससे देश व संसार में अज्ञान का अन्धकार फैल गया। अविद्याजन्य मत-मतान्तर उत्पन्न हो गये जो आज भी समाप्त होने का नाम नहीं ले रहे हैं। आज भी लोगों में सत्य ज्ञान के प्रति प्रवृत्ति जागृत नहीं हो सकी है। यह आज के समय का सबसे बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्यों में सत्य ज्ञान की प्राप्ति व उसके अभ्यास की प्रवृत्ति नहीं है। इसका परिणाम मनुष्य व देशवासियों को दुःख के अतिरिक्त अन्य कुछ होने वाला नहीं है। इसे ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में अच्छी तरह से समझाया है। वेद ज्ञान दुःखों से मुक्ति का कारण है। यदि वेद ज्ञान से शून्य होंगे तो हमारे आत्मिक व शारीरिक दुःख दूर नहीं होंगे। जब तक मुक्त नहीं होंगे, भिन्न-भिन्न योनिपयों में बार बार हमारा जन्म होता रहेगा।

शेष पृष्ठ 8 पर...

शुद्धि समाचार में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

समाजवाद के पोषक–श्रीकृष्ण

–श्री विश्वम्भरनाथ अग्रवाल

समाज मनुष्य के उन सब मानवीय सम्बन्धों का नाम है, जिनसे शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व को बल मिलता है। संसार के समस्त प्राणी परमात्मा की विराट शक्ति से उत्पन्न हुए हैं, उनमें मनुष्य अपनी बुद्धि, अपने विवेक–बल के कारण सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसलिये आपस में किसी प्रकार की घृणा, वैमनस्य या बुरी भावना को स्थान देना सर्वथा अनुचित है। सबसे मिल कर रहना, सबके प्रति प्रेमभाव रखना, और सबका भला चाहना समाजवाद है। न्याय–संगत सुधार, आर्थिक समानता, लोक–हितकारी राज्य का गठन एवं पारस्परिक संतुलन बनाये रखना समाजवाद की प्रमुख विशेषताएं हैं।

यदि सम्पूर्ण समाज उन्नत, समृद्ध और शक्ति–शाली है, तो व्यक्ति विशेषरूप से अधिक उन्नति–शील, सुसंस्कृत तथा यशस्वी होता है। समाज के छोटे से छोटे, निर्धन, कुरूप, व्यक्ति का भी मूल्य है। उसकी उपेक्षा करके किसी विशेष व्यक्ति, वर्ग या समुदाय को अधिक सुविधाएं देते जाना मानवता के प्रति विश्वासघात करना है और मानव–भावनाओं को कुंठित करना है। मनोवैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक खोजों व प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया है कि भावनाएं जीवन की ऐसी दृढ़ आधार–शिला हैं, जिस पर मानवता का महल स्थायी बनता है। यद्यपि बुद्धिबल का महत्त्व कम नहीं है, क्योंकि बुद्धि–बल के लेसदार सीमेन्ट से ही भावनाएं जोड़ी जाती हैं और भावनाएं ही सुख–दुःख व परम आनन्द का अनुभव प्राप्त कराती हैं। भावनाओं के अुनसार जीवन बिताने की कसौटी मनुष्य का व्यवहार है, जो दूसरे को तो सुख–दुःख देता ही है, स्वयं भी उससे दुःखी संतप्त या प्रसन्नचित्त व आनन्दित होता है। यही व्यवहार, (अमल) न्याय, हितकारी कार्य आदि समाजवाद के मापदण्ड हैं। सामाजिक सेवाओं के विस्तृत क्षेत्र से ही लोकहित सम्पन्न होता है और लोक–हित, जन–कल्याण, शोषित, दलित व निर्बल वर्ग की जीवन–दशा में सुधार लाना समाजवाद है। गरीबी, बेकारी, शोषण व अन्याय को रोकना एवं समता, बन्धुता, निष्कपटता को फैलाना जनता की सच्ची सेवा, सच्चा समाजवाद है।

कृष्ण के जीवन और कार्यों पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे पूर्णरूप से जन–हितैषी थे। संसार के छोटे से छोटे वे बड़े से बड़े मनुष्य में कोई भेद नहीं करते थे। 'सर्वभूतहिते रतः' कर्म करना उनका महान् उपदेश था। कोई काम व्यक्तिगत लाभ के लिये नहीं करना है, वरन् सब की भलाई के लिये सदा काम में लगे रहना है। 'कुरु कर्मेव तस्मा–त्त्वम्' का नियम जीवन के प्रत्येक पल के लिये बताया गया है, जिस से व्यक्ति निष्क्रियता, व आलस्य से अछूता रहे। जब मनुष्य स्वयं कार्य करता रहेगा, तो जड़ प्रकृति भी क्रियाशील रहेगी और उसकी क्रियाशीलता से प्रत्येक प्रकार की उपज में वृद्धि होगी, जो जन–जन के कल्याण का साधन होगी।

कृष्ण जी श्रेष्ठतम योगी, योगिराज कहे जाते हैं। उनके योग का तात्पर्य चित्तवृत्ति–निरोध से ही नहीं है, वे केवल ध्यान, धारणा या प्राणायाम आदि साधनों पर ही जोर देकर संसार से निवृत्तिमार्ग अपनाने को नहीं कहते, वरन् "योगः कर्मसु कौशलम्" की शिक्षा भी देते हैं। अपने–अपने कर्म में कुशलता, दक्षता प्राप्त करना ही जीवन का सार है। महामना कृष्ण के अनुसार जीवन की सार्थकता, कर्म की कसौटी युद्ध–क्षेत्र, संसार के ऊँच–नीच के क्षेत्र, राजमहल, गुरु की पाठशाला, गांव–गांव की दुग्ध–शालाओं, पशु–पालन व कुँजों में पाई जाती है। जंगलों या हिमालय की गुफाओं में समाधि लगा कर कर्म की महानता को नहीं मापा जा सकता।

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि।।

(गीता 2,28)

जीवन में सुख–दुःख हानि–लाभ, जय–विजय सभी आते रहते हैं। उन सबका मुकाबला करना मनुष्य का कर्म है, कर्त्तव्य है। इस कर्म के अनुष्ठान से न राजा बच सकता है, न रंक, न ज्ञानी बच सकता है, न मूर्ख, न निर्धन, न धनी.....ऐसा करना सब अवस्थाओं में सब के लिये आवश्यक है। ऐसे कर्मों में कामना छोड़ कर लगा रहना मनुष्य के चित्त की शुद्धि करता है और अन्तर–हृदय को बलवान् बनाता है।

कृष्ण के जीवन की सब–क्रियाएँ सहयोग, संगठन व छोटे–बड़े के साथ मेल करने पर जोर देती हैं। वे वन में ग्वालों के साथ रह कर मेल से गौएं चराते हैं, अपना रहन–सहन ग्वालों की ही रहन–सहन के रूप में पेश करते है। रसखान कवि कहते हैं :–

या लकुटी औ कामरिया पर,
राज तिहूँ पुर को तजि डारौ।

कितनी सादी, सरल निर्धनों के उपयुक्त वेश–भूषा है कृष्ण की, जिस से गांव के सभी बाल–बालिकाएँ बिना भेद किये हुए उनसे मिलते और उनके साथ खेलते हैं। व्रज में इन्द्र के प्रकोप से जब अत्यधिक वर्षा होती है, तो कृष्ण स्वयं गोवर्धन–पर्वत की छत–छाया में सब को रख कर प्रेम, सौहार्द और संगठन का दृश्य उपस्थित करते हैं। समाज की सहायता का मूर्तिमान् उदाहरण कृष्ण के व्रज के जीवन में स्थान–स्थान पर मिलता है।

मथुरा जाते हुए कृष्ण जी सुदामा माली व त्रिवका (कुब्जा) से समानता का व्यवहार करते हैं। उनका आतिथ्य स्वीकार करने में जरा भी संकोच नहीं करते। मथुरा पहुँचने पर उनकी शिक्षा–दीक्षा का प्रबन्ध गुरु सन्दीपनी के आश्रम में सभी प्रकार के धनी–निर्धन, ऊँच–नीच बालकों के साथ होता है। सभी के साथ उठना–बैठना, खाना–पीना, पहनना एक–सा है। वे किसी पब्लिक स्कूल या मान्टेसरी विद्यालय में भेद–विभेद की शिक्षा नहीं पाते, वरन् भारतीय संस्कृति के सम्मिलित जीवन की शिक्षा ग्रहण करते हैं। इस संस्कृति के ज्ञान का अवलोकन हम युधिष्ठिर के राजसूय–यज्ञ में करते हैं, जबकि द्वारकानाथ कृष्ण स्वयं यज्ञ के अतिथियों के चरण धोने व भोजन के बाद उनकी जूठी पत्तलें उठाने का काम करते हैं। क्या आज के समाजवाद में किसी पदाधिकारी, मंत्री या बड़े नेता से ऐसी अपेक्षा की जा सकती है?

द्वारकाधीश सिंहासन पर विराजमान हैं, गरीब ब्राह्मण सुदामा के आगमन की सूचना मिलती है। ऐसे समय कृष्ण के प्रेमपूर्ण, सौजन्य–भरे व्यवहार को क्या कोई भूल सकता है?आवश्यकता है भारतीय संस्कृति, भारतीय समाजवाद, भारतीय शील, सौजन्य और प्रेमपूर्ण शिक्षा की जो शत–प्रतिशत आदरणीय है। कृष्ण राजदूत बन कर दुर्योधन के दरबार में जाते हैं और दुर्योधन के नाना प्रकार के भोजन छोड़ कर विदुर की शाक–भाजी खाते हैं और राजदूत का आदर्श उपस्थित करते हैं। यही नहीं युद्ध में सहायता मांगने के लिये आये दुर्योधन और अर्जुन दोनों के साथ समान व्यवहार करते हैं और बिना भेद–भाव किये दोनों की उनकी इच्छानुसार सहायता करते हैं। यह है आपस में समझौता कराने और वैमनस्य टालने का अद्‌भुत प्रयत्न, जो कृष्ण अपने समता के व्यवहार से प्रस्तुत करते हैं।

कृष्ण के व्यावहारिक जीवन के अतिरिक्त गीता के श्लोकों में समता का उपदेश स्थान–स्थान पर मिलता है:–

"स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्।"

सभी प्रकार के मनुष्य, चाहे वे किसी भी श्रेणी के हों, परम गति को प्राप्त होते हैं। यह अधिकार संन्यासी, गृहस्थ–सभी को प्राप्त है।

सुहृन्मित्रार्युदासीन–मध्यस्थ–द्वेष्य–बन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते।।

यहाँ श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि साधक को सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेषी, बन्धु, धर्मात्मा और पापात्मा–सब के प्रति समान भाव वाला होना चाहिए।

कृष्ण से समाजवाद और समता का इससे अच्छा और क्या उपदेश हो सकता है कि उन्होंने गलत काम करने वाले अपने आत्मीय जनों को भी दण्ड देने, यहां तक कि उन्हें मारने में भी संकोच नहीं किया।

कृष्ण–युग के इतिहास व राजनीति पर दृष्टि डालने से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि कृष्ण ने अत्याचार–मूलक, एकसत्तात्मक जरासन्ध तथा उसके साथी शिशुपाल का वध करके तथा कौरवों का विध्वंस करा कर युधिष्ठिर के न्यायपूर्ण, आत्म–निर्णय–मूलक, स्वार्थरहित नीतिपूर्ण साम्राज्य की स्थापना की, जिससे भारत के इतिहास में फिर धर्माचरण–मूलक तथा शान्ति–प्रिय नीति की स्थापना हुई और जन–जन सद्व्यवहार में प्रवृत्त हो सका।

स्वामी दयानन्द के शब्दों में शील एवं सदाचार से भरपूर श्रीकृष्ण का इतिहास भारत में अत्युत्तम है।

सम्पादकीय

– आचार्य गवेन्द्र शास्त्री

इस मास में श्रावणी तथा जन्माष्टमी जैसे महत्वपूर्ण पर्व आर्यों द्वारा सोत्साह मनाये जायेंगे। श्रावणी का सम्बन्ध वेदों के स्वाध्याय तथा जन्माष्टमी योगेश्वर श्रीष्कृष्ण के पावन जीवन से सम्बद्ध हैं। आर्य जाति का स्वत्व वेद और प्रेरणास्रोत वैदिक मर्यादाओं के पालन कर्ता श्रीकृष्ण जैसे महामानवों के जीवन पर आधृत हैं। सदियों से आर्यजाति अपने इन पूर्व पुरूषों पुण्यपुरूषों से प्रेरणा प्राप्त कर अनुप्राणित होती रही है। कालक्रम से विकृतियाँ भी आती रही हैं। वर्तमान में एक बहुत बड़ा जन समुदाय वेद तथा वैदिक विचार धारा से दूर होकर विकृति का पात्र बन गया है और वैदिक मर्यादाओं के संवाहक राम तथा श्रीकृष्ण जैसे महापुरूषों के पावन जीवन में सांस्कृतिक विकृति उत्पन्न कर, उसी का उपासक होकर रह गया है। महाभारत काल के पश्चात् रचित पौराणिक साहित्य ने इस विकृत सांस्कृतिक विस्तार को प्रचुर प्रोत्साहन प्रदान किया है। ऋषि दयानन्द ऐसे प्रथम महापुरुष हैं जिन्होंने अपने ओजस्वी व्यक्तित्व से इस अन्धविश्वास को विध्वस्त करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। अपने जीवन काल में ही उन्होंने पाखण्ड खण्डिनी पताका फहरा कर इस विकृति का साहसिक विरोध किया तथा आर्य सन्तानों को वैदिक मान्यताओं की ओर, ऋषि–मुनियों की निष्पाप, विश्वकल्याणकारी जीवन शैली की ओर चलने की प्रेरणा प्रदान की। आज आर्य जाति की दुर्दशा का एक मात्र कारण वेदमार्ग से उसका भटक जाना है। ऋषि दयानन्द ने श्रीराम, श्रीकृष्ण जैसे महापुरूषों के जीवन से जुड़ी प्रत्येक विकृति को अस्वीकार कर उन्हें वैदिक परम्पराओं से सुसंस्कृत महामानव का सम्मान दिया। उन्होंने धार्मिक सामाजिक, राजनीतिक, मर्यादाओं के लिए ही नहीं अपितु समस्त कर्तव्य कर्म में शुचिता के लिए वेदों को प्रमाण माना और उसी के अनुसार जीवन यापन की प्रेरणा प्रदान की। श्रावणी पर्व का सम्बन्ध वेद तथा वैदिक वाङ्मय के स्वाध्याय से जुड़ा है। वेद का स्वाध्याय और तदनुरूप जीवन निर्माण ही मनुष्य का परम धर्म है। इस सम्बन्ध में ऋषि का कहना है कि वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है यह वाक्य प्रत्येक आर्य के लिए विशेष रूप से विचारणीय है। आज आर्य यदि श्रीकृष्ण जैसे तेजस्वी बनने का संकल्प लें, वैदिकी मर्यादा में उस तेज को धारण करें, पाखण्ड, अन्याय, अत्याचार के नाश के लिए श्रीकृष्ण की तरह दृढ़ता से संकल्प सिद्धहोकर सामने आएं तो आसुरी वातावरण निश्चित रूप से नष्ट हो जाएगा। दुर्भाग्य यही है कि आज हम महापुरूषों का नाम लेते हैं पर उनके गुणों को धारण करने में हमारी रूचि नहीं होती। हम उस सुदर्शन चक्रधारी, असुर गण विनाशक, वेद विद्या निष्णात श्रीकृष्ण जैसे तेजस्वी बन कर विश्व को सुख–समृद्धि की ओर लायें। छोटा सा दीपक अपने तेज से अपार अन्धकार को समाप्त कर प्रकाश कर देता है। जिसमें तेज होता है वही बलवान होता है। योगी भर्तृहरि के शब्दों में "तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः।" परमात्मा आर्य जाति को तेजस्वी बनायें हममें अपने दिव्य तेज का आधान करें।

"तेजो ऽसि तेजो मयि धेहि"।

यज्ञोपवीत–संस्कार एवं श्रावणीकर्म

– डॉ. देवेश प्रकाश आर्य

उपनयन–संस्कार में गायत्रीमन्त्र के उपदेश के साथ ही ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करने की दीक्षा लेते हुए वटुक गुरु की शरण में जाता है, इस प्रकार वह व्रत के बन्धन में बँधता है। इसी लिये उपनयन को व्रतबन्ध के नाम से भी जाना जाता है। उपनयन से पूर्व बालक पूर्ण रूप से स्वच्छन्द होता है, किंतु बाद में उसे कामाचार, कामभक्षण आदि दोषों से बचना पड़ता है। यज्ञोपवीत धारण करने वाले ब्रह्मचारी को मौञ्ज (मूँज)– की बनी मेखला धारण करना पड़ता है। संस्कार के बाद उस बालक की 'द्विज' संज्ञा होती है।

यज्ञोपवीत – यज्ञोपवीतसूत्र को उपवस्त्र भी माना गया है। यह 9 तन्तुओं से बना होता है, जो 4 अँगुलियों पर 96 बार लपेटकर बनता है। यह वेदों में स्थित कर्मकाण्ड एवं उपासनाकाण्ड के क्रमश 80+16–96 सहस्र मन्त्रों का द्योतक है। नौ तन्तुओं के क्रमशः नौ अधिष्ठातृ देव हैं। यथा – ओंकार, अग्नि, नाग, सोम, पितर, प्रजापति, वायु, यम (पाठभेद सूर्य) एवं विश्वेदेवता। 96 बार लपेटे गये सूत्र को ऊपर से बायीं ओर तीन बार लपेटना रजो गुण, तमोगुण एवं सत्त्वगुण को दर्शाता है। पुनः त्रिगुणित कर दाहिनेसे नीचे की ओर ले जाना क्रमशः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, ऋषि–ऋण, देव–ऋण, पितृ–ऋण एवं ज्ञान, भक्ति, कर्मरूप ब्रह्मगाँठ का द्योतक है तो कहीं वेदत्रयी–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद को ब्रह्मगाँठ कहा गया है। शैवसम्प्रदाय में यज्ञोपवीत (त्रिपिण्डा) – के अनुसार ज्ञान, पवित्रता और तपसे प्राप्त होने वाली चैतन्यता ब्रह्मगाँठ है। 96 की संख्या के बारे में कहा गया है–

तिथिर्वार च नक्षत्रं
तत्त्ववेदगुणान्वितम्।
कालत्रयं च मासाश्च ब्रह्मसूत्रं हि
षण्णवम्।।

अर्थात् 15 तिथियाँ + 7 वार + 27 नक्षत्र + 25 तत्त्व + 4 वेद + 3 गुण + 3 काल + 12 महीने – इनका योग 96 होने के कारण यज्ञोपवीत का इनसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक अन्य मान्यतानुसार हमारे शरीर की कुल लम्बाई स्वयं की 96 अँगुलियों के बराबर होती है। अतः यह यज्ञोपवीत सदा सोते–जागते, उठते–बैठते, यह बोध कराता है कि यह 96 अँगुलियों का शरीर मुझसे अलग है, शरीर यानी मैं नहीं, कर्ता कोई और है और 'मैं ' वाला यह शरीर तो मात्र निमित्त है। यज्ञोपवीत कुछ ऐसे ही आत्मबोध के भाव को दर्शाता है। विशेष परिस्थितियों में इसे बदलकर दूसरा पहनने का विधान है। मल–मूत्र का त्याग करते समय जनेऊ को दाहिने कान पर लपेटने से गुप्तेन्द्रिय तथा अण्डकोश के बहुत – से दोषों का नाश होता है एवं मूत्रोत्सर्ग के समय होने वाले वीर्यस्राव को भी रोकने में मदद मिलती है। यज्ञोपवीत–संस्कार होने पर ही सभी धर्म–कर्मों को करने का अधिकार प्राप्त होता है।

यज्ञोपवीत को संस्कारसम्पन्न करने तथा नूतन यज्ञोपवीत धारण करने और देवताओं, ऋषियों तथा पितरों को सन्तृप्त करने का कर्म श्रावणी महत्त्वपूर्ण संस्कार है। यह स्वाध्याय का संस्कार है। यज्ञोपवीत धारण करने के उपरान्त सभी यज्ञोपवीत धारकों को श्रावणी पर्व मनाना चाहिये। जैसा कि नाम से ज्ञात होता है। कि श्रावणमास की पूर्णिमा पर यह पर्व पड़ने से इसे श्रावणी कहते हैं। वर्षभर में चाहकर अथवा अनजाने में किये गये अच्छे–बुरे कार्यों का सुविचार एवं प्रायश्चित्त ही श्रावणी कर्म है। वेदों के आधार पर श्रावणी की कार्यपद्धति–कार्यशैली भिन्न–भिन्न हो सकती है, परंतु दिशा एवं लक्ष्य एक ही होता है।

इस प्रकार आन्तरिक एवं बाह्य शरीर शुद्धि के बाद गायत्री का ध्यान करते हुए गायत्री मन्त्रों का उच्चारण कर प्रतिष्ठित यज्ञोपवीत को धारण किया जाता है।

ओ३म्

पावन पर्व मनायें हम सब ।
जीवन सुखी बनायें हम सब ।
आर्यों के त्योहार हैं पावन ।
घर – समाज सबके मन भावन ।
मिल जुल कर सब पर्व मनायें ।
अपने राष्ट्र को आगे बढायें ।

'देश को स्वतन्त्रता दिलाने में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की भूमिका'

स्वतन्त्रता दिवस पर विशेष –

–मनमोहन कुमार आर्य,

महाभारत युद्ध के बाद अविद्या का अन्धकार सारे देश में फैल गया जो भारतवर्ष की पराधीनता का कारण बना। उस अविद्यान्धकार से हम आज तक भी स्वतन्त्र नहीं हो पाये हैं। महाभारत काल के बाद अविद्या के कारण अहिंसा का पर्याय यज्ञों में हिंसा होना आरम्भ हो गया था। वेदों के यथार्थ अर्थ भी लोगों की पहुंच से दूर हो गये थे। यज्ञ में हिंसा के कारण कालान्तर में अभक्ष्य पदार्थों का सेवन भी आरम्भ हो गया था। गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वर्णव्यवस्था भंग व विकृत हो गई थी जिसका स्थान जन्मना जाति व्यवस्था ने ले लिया था जिसका कालान्तर में भयंकर परिणाम हुआ जो आज भी कुछ कुछ विद्यमान है। हिंसा युक्त मिथ्या कर्मकाण्ड व अज्ञान आदि के कारण भारत में वाममार्ग का प्रचलन हुआ। कालान्तर में इससे प्रभावित बौद्ध व जैन मत अस्तित्व में आये। वैदिक मत धीरे–धीरे समाप्त व विकृतियों को प्राप्त होता रहा। इन्हीं विकृतियों के युग में शैव, वैष्णव व शाक्त आदि मत भी अस्तित्व में आये। भारत से दूर यूरोप व अरब देशों में पारसी, ईसाई व इस्लाम मतों का आविर्भाव हुआ। इनमें भी शाखायें–प्रशाखायें उत्पन्न हुईं जिसका कारण अविद्या ही है। अविद्या भी मनुष्यों को गुलाम बनाती है और विद्या से मनुष्य स्वतन्त्र होता है। महर्षि दयानन्द के सन् 1863 में कार्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने से पूर्व देश अविद्या में डूबा हुआ था। संसार के सभी लोग ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति (कारण व कार्य दोनों) के यथार्थ स्वरूप को भूल चुके थे। ऋषि दयानन्द को 14 वर्ष की आयु में ही ईश्वर के यथार्थ स्वरूप में भ्रम हो चुका था जिसका वह समाधान करना चाहते थे। इसकी खोज ही उनके जीवन का मिशन बना था। सन् 1838 से सन् 1863 तक वह ईश्वर के सत्य स्वरुप को जानने व उसे प्राप्त करने में लगे रहे और अनेक गुरुओं की कृपा से वह अपने ईश्वर के यथार्थ स्वरूप की खोज के मिशन में सफल हुए। उनके मुख्य गुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती, मथुरा थे जिनसे उनकी समस्त शंकाओं का निराकरण ही नहीं हुआ अपितु उन्हें ईश्वरीय ज्ञान वेद और आर्ष ग्रन्थों व परम्पराओं का ज्ञान भी हुआ था। संसार को अविद्या के अन्धकार से मुक्त वा स्वतन्त्र कराने की प्रेरणा भी उन्हें गुरु विरजानन्द जी से ही मिली थी।

आज सत्तरवें स्वतन्त्रता दिवस 15 अगस्त, 2016 पर हम स्वामी दयानन्द जी के सत्यार्थप्रकाश के अष्टम् समुल्लास में दिये गये एक उपदेश को प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें आदि सृष्टि का स्थान, आर्यावर्त्त देश व इसकी सीमायें, आर्यों का आदि स्थान, देश की परतन्त्रता के कारण, विदेशी व स्वदेशी राज्य में अन्तर तथा स्वदेशीय राज्य का महत्व आदि अनेक विषयों की उन्होंने चर्चा की है। वह कहते हैं कि **(प्रश्न) मनुष्यों की आदि सृष्टि किस स्थल में हुई? (उत्तर) त्रिविष्टिप् अर्थात् जिस को 'तिब्बत' करते हैं।** (प्रश्न) आदि सृष्टि में एक जाति थी वा अनेक? (उत्तर) एक मनुष्य जाति थी, पश्चात् **"विज्ञानीह्यार्य्यान्ये च दस्यवः"** यह ऋग्वेद का वचन है। श्रेष्ठों का नाम आर्य, विद्वान, देव और दुष्टों के दस्यु अर्थात् डाकू, मूर्ख नाम होने से आर्य और दस्यु दो नाम हुए। **"उत उतार्ये"** अथर्ववेद का वचन है। आर्यों में पूर्वोक्त प्रकार से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र, चार भेद हुए। द्विज विद्वानों का नाम आर्य और मूर्खों का नाम शूद्र और अनार्य अर्थात् अनाड़ी नाम हुआ। **(प्रश्न) फिर वे यहां कैसे आये?** (उत्तर) जब आर्य और दस्युओं में अर्थात् विद्वान् जो देव, अविद्वान् जो असुर, उन में सदा लड़ाई बखेड़ा हुआ किया, **जब बहुत उपद्रव होने लगा, तब आर्य लोग सब भूगोल में उत्तम इस भूमि के खण्ड को जान कर यहीं आकर बसे। इसी से इस देश का नाम "आर्यावर्त" हुआ। (प्रश्न) आर्यावर्त की अवधि कहां तक है?** (उत्तर)

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः।।1।।
सरस्वतीद्वशद्धत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशमार्यावर्त्तं प्रचक्षते।।2।।

उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पूर्व और पश्चिम में समुद्र।।1।। तथा सरस्वती पश्चिम में, अटक नदी पूर्व में, दृषद्वती जो नेपाल के पूर्वभाग पहाड़ से निकल के बंगाल के आसाम के पूर्व और ब्रह्मा (ब्रह्मदेश, बर्मा वा म्यामार) के पश्चिम ओर हो कर दक्षिण के समुद्र में मिली है, जिसको ब्रह्मपुत्र (नदी) कहते हैं। और अटक जो उत्तर के पहाड़ों से निकल के दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में आकर मिली है। हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं, उन सब को आर्यावर्त्त इसलिये कहते हैं कि **यह आर्यावर्त देव अर्थात् विद्वानों ने बसाया और आर्यजनों के निवास करने से आर्यावर्त कहाया है। (प्रश्न) प्रथम इस देश का नाम क्या था, और इसमें कौन बसते थे? (उत्तर) इसके पूर्व इस देश का नाम कोई भी नहीं था, और न कोई आर्यों के पूर्व इस देश में बसते थे, क्योंकि आर्य लोग सृष्टि को आदि में कुछ काल के पश्चात् तिब्बत से सीधे इसी देश में आकर बसे थे।** (प्रश्न) कोई कहते हैं कि ये लोग ईरान से आये, इसी से इन लोगों का नाम आर्य हुआ है। इन के पूर्व यहां जंगली लोग बसते थे कि जिन को असुर और राक्षस कहते थे। आर्य लोग अपने को देवता बतलाते थे और उन का जब संग्राम हुआ, उस का नाम देवासुर संग्राम कथाओं में ठहराया। (उत्तर) यह बात सर्वथा झूठ है। क्योंकि –

विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिश्मते रंधया भासद व्रतान्। (ऋग्वेद मंत्र 1/51/8)

'उत शूद्रे उतार्ये'। यह भी अथर्ववेद का प्रमाण है। यह लिख चुके हैं कि आर्य नाम धार्मिक, विद्वान, आप्त, पुरुषों का और इन से विपरीत जनों का नाम दस्यु अर्थात् डाकू, दुष्ट, अधार्मिक और अविद्वान् है तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, द्विजों का नाम आर्य और शूद्र का नाम अनार्य अर्थात् अनाड़ी है। **जब वेद ऐसे कहता है, तो दूसरे विदेशियों (अंग्रेजों वा अन्यों) के कपोलकल्पित को बुद्धिमान् लोग कभी नहीं मान सकते।** और देवासुर संगाम में आर्यावर्तीय अर्जुन तथा महाराजा दशरथ आदि हिमालय पहाड़ में आर्य और दस्यु–म्लेच्छ–असुरों का जो युद्ध हुआ था, उसमें देव अर्थात् आर्यों की रक्षा और असुरों के पराजय करने का सहायक हुए थे। इससे यही सिद्ध होता है कि आर्यावर्त के बाहर चारों ओर जो हिमालय के पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, देश में मनुष्य रहते हैं, उन्हीं का नाम असुर सिद्ध होता है। क्योंकि जब–जब हिमालय प्रदेशस्थ आर्यों पर लड़ने को चढ़ाई करते थे, तब–तब यहां के राजा–महाराजा लोग उन्हीं उत्तर आदि देशों में आर्यों के सहायक होते। और जो श्री रामचन्द्र जी से दक्षिण में युद्ध हुआ है, उस का नाम देवासुर संगाम नहीं है, किन्तु उस को राम–रावण अथवा आर्य और राक्षसों का संग्राम कहते हैं। **किसी संस्कृत ग्रन्थ में वा इतिहास में नहीं लिखा कि आर्य लोग ईरान से आये और यहां के जंगलियों से लड़कर, जय पा कर, निकाल कर, इस देश के राजा हुए। पुनः विदेशियों का लेख माननीय कैसे हो सकता है?** और–

आर्यवाचो म्लेच्छवाचः सर्वे ते दस्यवः स्मृताः।।1।।
म्लेच्छदेशस्त्वतः परः।।2।।

जो आर्यावर्त देश से भिन्न देश हैं, वे दस्यु देश और म्लेच्छ देश कहाते हैं। इस से भी यह सिद्ध होता है कि आर्यावर्त से भिन्न पूर्व देश से लेकर ईशान, उत्तर वायव और पश्चिम देशों में रहने वालों का नाम दस्यु और म्लेच्छ तथा असुर है। और, नैर्ऋत्य, दक्षिण तथा आग्नेय दिशाओं में आर्यावर्त से भिन्न रहने वाले मनुष्यों का नाम राक्षस है। अब भी हबषी लोगों का स्वरूप देख लो, वह जैसा भयंकर राक्षसों का वर्णन किया है, वैसा ही दीख पड़ता है। और, आर्यावर्त की सूध पर नीचे रहने वालों का नाम नाग और उस देश का नाम पाताल इसलिये कहते हैं कि वह देश आर्यावर्तीय मनुष्यों के पाद अर्थात् पग के तले है और उनको नागवंशी अर्थात् नाग नाम वाले पुरुष के वंश के राजा हाते थे। **उसी की उलोपी राजकन्या से अर्जुन का विवाह हुआ था। अर्थात्, इक्ष्वाकु, से लेकर कौरव–पांडव तक सर्व भूगोल में आर्यों का राज्य और वेदों का थोड़ा थोड़ा प्रचार आर्यावर्त से भिन्न देशों में भी रहा।** तथा, इस में यह प्रमाण है कि ब्रह्मा का पुत्र विराट, विराट्का मनु, मनु के मरीच्यादि दश, इनके स्वायंभवादि सात राजा और उनके संतान इक्ष्वाकु आदि राजा, जो आर्यावर्त के प्रथम राजा हुए, जिन्होंने यह आर्यावर्त बसाया है।

अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी, किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखंड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है, सो भी विदेशियों के पादाकान्त (परतन्त्र वा गुलाम) हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतंत्र है। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को (परतन्त्रता आदि) अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है।

कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा, मतमतांतर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता–माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों (अंग्रेजों) का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। परन्तु, भिन्न–भिन्न भाषा, पृथक पृथक शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे, परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। इसलिये जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था वा इतिहास लिखें, उसी का मान्य करना भद्र पुरुशों का काम है।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश का प्रथम संस्करण सन् 1875 में प्रकाशित कराया था। इसका दूसरा संस्करण उन्होंने सन् 1883 में तैयार किया था जो प्रेस में प्रकाशनाधीन था और 30 अक्तूबर सन् 1883 को उनकी मृत्यु के बाद सन् 1884 में प्रकाशित हुआ। **स्वराज्य भाब्द का प्रयोग,** देश की **आजादी का विचार व इनका लिखित कथन देने वाले इतिहास में सर्वप्रथम व्यक्ति महर्षि दयानन्द ही हैं।** विदेशी राज्य का विरोध व स्वदेशी राज्य की श्रेष्ठता की चर्चा उन्होंने केवल सत्यार्थप्रकाश में ही नहीं की अपितु आर्यों की विनय वा प्रार्थना की पुस्तक आर्याभिविनय के अनेक मन्त्रों के अर्थों और **'संस्कृत वाक्य प्रबोध'** जैसी बालक–बालिकाओं की लघु पुस्तक में भी की है। स्वामी दयानन्द के पूर्व स्वदेश व स्वराज्य की चर्चा भारत के किसी मनीषी के ग्रन्थ में नहीं मिलती। वह पहले मनीषी थे जिन्होंने **'विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं, स्वदेशीय राज्य सर्वोपरि होता है'** आदि वचनों को प्रस्तुत कर देश की आजादी की नींव रखी थी। देश को आजादी दिलाने वाले नरम व गरम दलों के आद्य आचार्य श्री महादेव रानाडे (श्री गोपाल कृष्ण गोखले के राजनैतिक गुरु) और पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा भी महर्षि दयानन्द के साक्षात् शिष्य थे। बताया जाता है कि कांग्रेस (स्थापना सन् 1885) के इतिहास लेखक सर सीताभि पट्टारमैया ने लिखा है कि आजादी के आन्दोलन में भाग लेने वाले अस्सी प्रतिशत लोग आर्यसमाजी थे। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा सहित स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती, पं. राम प्रसाद बिस्मिल, सरदार भगत सिंह, लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द आदि आजादी के अनेक दिवाने भी महर्षि दयानन्द के शिष्य थे। शहीद भगत सिह के दादा सरदार अर्जुन सिंह व उनका पूरा परिवार ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज का अनुयायी था। यदि स्वतन्त्रता के संघर्ष पर निष्पक्ष दृष्टि डालें तो देश की आजादी में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज का सर्वाधिक योगदान है। आर्यसमाज के कुछ विद्वानों का यह भी विचार है कि सत्यार्थप्रकाश में अंग्रेजों के विदेशी राज्य का स्पष्ट विरोध ही स्वामी दयानन्द की हत्या के षड्यन्त्र का मुख्य कारण था जो आज भी रहस्य है। आज स्वतन्त्रता दिवस पर लालकिले की प्राचीर से प्रधानमंत्री जी द्वारा स्वामी विवेकानन्द की चर्चा भी की है। स्वामी दयानन्द के देश को स्वतन्त्रता दिलाने में उनके योगदान को नजरन्दाज करने से हमें पीड़ा होती है। हमें लगता है कि स्वामी दयानन्द का सही मूल्याकंन होना और स्वतन्त्र भारत में उन्हें उनके योगदान के अनुरूप न्याय मिलना बाकी है। आज स्वतन्त्रता वा स्वराज्य दिवस पर हम ऋषि दयानन्द का सादर स्मरण कर देशवासियों को स्वतन्त्रता दिवस की बधाई देते हैं।

फोन:09412985121

अब वह दिन दूर नहीं जब भारत विश्व मंच पर पूरी दुनिया को राह दिखाने वाला होगा!

– डॉ. जगदीश गाँधी

हिन्दू कोई धर्म या संप्रदाय नहीं, बल्कि भारत की राष्ट्रीय संस्कृति हैं :-

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी एक प्रखर विचारक, उत्कृष्ट संगठनकर्ता तथा एक ऐसे नेता थे जिन्होंने जीवनपर्यन्त अपनी व्यक्तिगत ईमानदारी व सत्यनिष्ठा को महत्त्व दिया। दीनदयाल जी की मान्यता थी कि **हिन्दू कोई धर्म या संप्रदाय नहीं, बल्कि भारत की राष्ट्रीय संस्कृति हैं।** वे भारतीय जनता पार्टी के लिए वैचारिक मार्गदर्शन और नैतिक प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी मजहब और संप्रदाय के आधार पर भारतीय संस्कृति का विभाजन करने वालों को देश के विभाजन का जिम्मेदार मानते थे। वह हिन्दू राष्ट्रवादी तो थे ही, इसके साथ ही साथ वे भारतीय राजनीति के पुरोधा भी थे। उनकी कार्यक्षमता और परिपूर्णता के गुणों से प्रभावित होकर **डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी** जी उनके लिए गर्व से सम्मानपूर्वक कहते थे कि- **'यदि मेरे पास दो दीनदयाल हों, तो मैं भारत का राजनीतिक चेहरा बदल सकता हूं'।**

सादगी जीवन के प्रतिमूर्ति पं. दीनदयाल उपाध्याय जी देश सेवा के लिए हमेशा तत्पर रहते थे :-

विलक्षण बुद्धि, सरल व्यक्तित्व एवं नेतृत्व के अनगिनत गुणों के स्वामी, पं. दीनदयाल उपाध्याय जी देश सेवा के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। उन्होंने कहा था कि 'हमारी राष्ट्रीयता का आधार भारतमाता है, केवल भारत ही नहीं। माता शब्द हटा दीजिए तो भारत केवल जमीन का टुकड़ा मात्र बनकर रह जाएगा। **पं. दीनदयाल जी की एक और बात उन्हें सबसे अलग करती है और वह थी उनकी सादगी भरी जीवनशैली। इतना बड़ा नेता होने के बाद भी उन्हें जरा सा भी अहंकार नहीं था।** पं. दीनदयाल उपाध्याय, पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी की गणना भारतीय महापुरूषों में इसलिये नहीं होती है कि वे किसी खास विचारधारा के थे बल्कि उन्होंने **किसी विचारधारा या दलगत राजनीति से परे रहकर राष्ट्र को सर्वोपरि माना।**

'मानवीय एकता' का मंत्र हम सभी का मार्गदर्शन करता है :-

एकात्म मानववाद के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का मानना था कि भारतवर्ष विश्व में सर्वप्रथम रहेगा तो अपनी सांस्कृतिक संस्कारों के कारण। पं. दीनदयाल जी द्वारा दिया गया मानवीय एकता का मंत्र हम सभी का मार्गदर्शन करता है। उन्होंने कहा था कि **मनुष्य का शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा ये चारों अंग ठीक रहेंगे तभी मनुष्य को चरम सुख और वैभव की प्राप्ति हो सकती है।** उनका कहना था कि जब किसी मनुष्य के शरीर के किसी अंग में कांटा चुभता है तो मन को कष्ट होता है, बुद्धि हाथ को निर्देशित करती है कि तब हाथ चुभे हुए स्थान पर पल भर में पहुँच जाता है और कांटें को निकालने की चेष्टा करता है, यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। सामान्यत: मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा इन चारों की चिंता करता है। मानव की इसी स्वाभाविक प्रवृति को पं. दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानववाद की संज्ञा दी **भारतीयता की अभिव्यक्ति राजनीति के द्वारा न होकर उसकी संस्कृति के द्वारा ही होगी :-**

उनका मानना था कि भारत की आत्मा को समझना है तो उसे राजनीति अथवा अर्थ-नीति के चश्मे से न देखकर सांस्कृतिक दृष्टिकोण से ही देखना होगा। **भारतीयता की अभिव्यक्ति राजनीति के द्वारा न होकर उसकी संस्कृति के द्वारा ही होगी।** समाज में जो लोग धर्म को बेहद संकुचित दृष्टि से देखते और समझते हैं तथा उसी के अनुकूल व्यवहार करते हैं, उनके लिये पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी की दृष्टि को समझना और भी जरूरी हो जाता है। वे कहते हैं कि विश्व को भी यदि हम कुछ सिखा सकते हैं तो उसे अपनी सांस्कृतिक सहिष्णुता एवं कर्तव्य-प्रधान जीवन की भावना की ही शिक्षा दे सकते हैं।

अर्थ के अभाव में धर्म टिक नहीं पाता है :-

पंडित दीनदयाल जी के अनुसार धर्म महत्वपूर्ण है परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि **अर्थ के अभाव में धर्म टिक नहीं पाता है।** एक सुभाषित आता है- **बुभुक्षित: किं न करोति पापं, क्षीणा जना: निष्करुणा: भवन्ति.** अर्थात भूखा सब पाप कर सकता है। विश्वामित्र जैसे ऋषि ने भी भूख से पीड़ित हो कर शरीर धारण करने के लिए चांडाल के घर में चोरी कर के कुत्ते का जूठा मांस खा लिया था। हमारे यहां आदेश में कहा गया है कि अर्थ का अभाव नहीं होना चाहिए क्योंकि वह धर्म का द्योतक है। इसी तरह दंडनीति का अभाव अर्थात अराजकता भी धर्म के लिए हानिकारक है।

पं. दीन दयाल उपाध्याय जी के विचार देश ही नहीं, दुनिया का मार्गदर्शन कर सकते हैं :-

हमारा मानना है कि पं. दीन दयाल उपाध्याय जी के विचार देश ही नहीं, दुनिया का मार्गदर्शन कर सकते हैं। उनका कहना था कि **हमारी प्रगति का आंकलन सामाजिक सीढ़ी के सर्वोच्च पायदान पहुंचे व्यक्ति से नहीं बल्कि सबसे निचले पायदान पर खड़े व्यक्ति की स्थिति से होगा।** उनका मानना था कि **भारत की सांस्कृतिक विविधता ही उसकी असली ताकत है और इसी के बूते पर वह एक दिन विश्व मंच पर अगुवा राष्ट्र बन सकेगा। कई साल पहले पहले उनके द्वारा स्थापित यह विचार आज माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी के द्वारा किये जाने वाले कार्यो के कारण मूर्तरूप ले रहा है।** आज भारत की सांस्कृतिक विरासत पूरी दुनिया को प्रकाशमान कर रही है और शायद वह दिन दूर नहीं जब भारत विश्व मंच पर पूरी दुनिया को राह दिखाने वाला होगा।

काल की त्रिवेणी तथा भारत वर्ष

– ब्रह्मदेव भाटिया

हमारे ग्रह पर प्रकृति जैव अजैव, दृश्य अदृश्य अनेक रूपों में विद्यमान है। प्रकृति, हमारे ग्रह पर, परमात्मा का सर्वसुन्दर तथा सर्व सम्पूर्ण लेख है। "मनुष्य" पृथ्वी पर अदभुत क्षमताओं से सम्पन्न प्रकृति का सर्वाधिक विकसित जैव रूप है। भारत वर्ष में अनन्त काल से मनुष्य ने प्रकृति संग स्नेह सत्कार के सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे। इन सम्बन्धों के माध्यम से मनुष्य ने, संसार में सब से पहले भारत में मानव संस्कृति को विकसित करना शुरु किया था। सांस्कृतिक विकास के एक चरण तक पहुंच कर मनुष्य ने परमात्मा, प्रकृति तथा मनुष्य के अन्तर सम्बन्धों पर चिन्तन करना शुरु दिया। इस चिन्तन से मनुष्य ने जिस ज्ञान का संचयन किया उसे "दर्शन" नाम दिया। भारत वर्ष संसार में एक ऐसा देश है जहां मानव संस्कृति तथा दर्शन का विपुल कोश है। समय की गति के सांगोपांगा सांस्कृतिक विकास की निरन्तरता अक्षुण्ण बनी रही। सांस्कृति निरन्तरता को बनाए रखने में भारत के विद्वान ऋषियों का महान योगदान रहा। ऋषियों ने आध्यात्म, योग, भाषा साहित्य, संगीत, नृत्य, गणित, समाज, शासन व्यवस्था, चिकित्सा, आदि ज्ञान के अनेक क्षेत्रों में भारतीय संस्कृति को समृद्ध किया। भारतीय संस्कृति का वर्चस्व ही था कि दूर देशों से ज्ञान प्राप्त करने तथा ज्ञानी जन ज्ञान पिपासा को तृप्त करने भारत वर्ष आते रहे। भारतीय संस्कृति के विकास का प्रवाह वद्ध रूप से भारत को काल त्रिवेणी (अतीत, वर्तमान, भविष्य) से जोड़ता है। सांस्कृतिक विकास की निरन्तरता भारतीय संस्कृति को हर युग में जीवन्त बनाए रखती है।

जनवरी 2017 को संसद के सयुक्त अधिवेशन में राष्ट्रपति जी का अभिभाषण, 4 फरवरी 2017 को उड्पि (केरल) में सन्त माध्वाचार्य के सातवें शताब्दी समारोह तथा 2 मार्च 2017 को ऋषिकेश के अन्तराष्ट्रीय योग शिविर को प्रधान मन्त्री जी का वीडियों कनफ्रैंसिग के माध्यम से सन्देश – यह सभी सम्बोधन भारत की सांस्कृतिक निरन्तरता का बोध कराते हैं।

भारत वर्ष हमारे ग्रह का, अपनी जीवन्तता के कारण, एक अनूठा भूखण्ड है। इसके भौगोलिक विस्तार पर भौतिक कार्य कलापों का वर्णन मात्र ही भारत की अस्मिता का परिचय नहीं देते। दूर अतीत से सांस्कृतिक विकास की निरन्तरता–इस निरन्तरता संग वर्तमान के कार्यकलाप–इन कार्य कलापों में निहित .....भविष्य के उद्देश्य भारत वर्ष की समग्रता का भान कराते हैं। भारत वर्ष की समग्रता काल त्रिवेणी (अतीत, वर्तमान, भविष्य) की सूत्रवद्धता में निहित है। इस सूत्रबद्धता से भारत की भारतीयता प्रकट होती है। भारत वर्ष का स्वतन्त्रता आन्दोलन भारत वर्ष की सांस्कृतिक निरन्तरता का एक उज्जवल आख्यान है। स्वतन्त्रता आन्दोलन भारत वर्ष के जन मानस के लिए एक पावन कर्म क्षेत्र का रूप ले गया था। इस आन्दोलन को सांस्कृतिक निरन्तरता का रूप प्रदान करने का काम राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, मदनमोहन मालवीय, महायोगी अरविन्द घोष सरीखी महान आत्माओं ने किया था। इस महत कार्य को महात्मा गांधी के चिन्तन तथा कार्य शैली ने अपने चरम तक पहुंचाया था। इस आन्दोलन का परम उद्देश्य मां भारती की स्वतन्त्रता थी। मां भारती ने 15 अगस्त 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्त की। भारत वर्ष का स्वतन्त्रता आन्दोलन–आन्दोलन मात्र नही था यह आन्दोलन मानवता के उच्च आदर्शों की स्थापना का आन्दोलन था। संसार भर के पत्रकारों, राजनीतिज्ञों, समाजशास्त्रियों, विचारको दार्शनिकों। जितना इस आन्दोलन के विषय में लिखा उतना किसी भी अन्य आन्दोलन या संघर्ष के विषय में नहीं लिखा गया।

द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त होने के थोडा समय पश्चात ही भारत वर्ष ने स्वतन्त्रता प्राप्त की थी। अंग्रेज शासकों ने भारत वर्ष के संसाधनों का युद्ध में भरपूर उपयोग कर भारत को दरिद्र बना कर छोड़ा था। देश के विभाजन ने देश को पूर्णतःक्षत विक्षत कर दिया था। भारत के तत्कालीन नेतृत्व ने भारत को दरिद्रता से मुक्त कराने का योजनाबद्ध प्रयास किया था। परन्तु बाद की सरकारों के पास देश के संसांधनों के उचित उपयोग तथा विकास की वैचारिकता का नितांत अभाव था। देश की जनता दशकों से ग़रीबी तथा अभावों का कष्ट झेल रही थी।

मां भारती ने स्वतन्त्रता पाई। स्वतन्त्र भारत में मां भारती के एक पुत्र ने जन्म लिया मां भारती के यह पुत्र भारत वर्ष के ही परिवेश में पला बढ़ा । देश की ग़रीबी से दो चार होते हुए शिक्षा की सीढ़िया चढ़ा । औपचारिक शिक्षा के सोपानों को पार करने के साथ शिक्षित होने से कहीं अधिक विद्वान बना। छात्र जीवन में ही देश के प्रति समर्पित एक राष्ट्रीय सगंठन का सदस्य बना। इस राष्ट्रीय संगठन के सम्पर्क से राष्ट्रीय व्यक्तित्व का विकास किया। मन, मस्तिष्क में देश के प्रति सर्मपण तथा सरोकार के भावों ने विकास पाया । राष्ट्रीयता के संस्कारों से देश के प्रति कुछ करने को प्रेरित किया। देश के प्रति कुछ करने के संकल्प को लेकर भारतीय जनता पार्टी में प्रवेश पाया। एक राज्य के मुख्य मंत्री के रूप में पूर्ण निष्ठा एवं संकल्प से काम किया। देश सेवा के साधक के रूप में अपने आप को किसी भी सुख सुविधा इच्छा अकांक्षा से मुक्त रखा। 2014 में भारत वर्ष में सामन्य चुनाव हुए। भा. ज. पा. ने मां भारती के इस पुत्र के नेतृत्व में चुनाव लड़े। भा.ज.पा. को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। भा.ज. पा. के निर्वाचित प्रतिनिधियों ने मां भारती के इस पुत्र को अपना नेता चुना। अपने मन्त्रिमण्डल के सहयोगियों संग राष्ट्रपति भवन के प्रांगण में प्रधान मन्त्री पद की शपथ ली। जनता ने मोदी–मोदी–मोदी का घोषकर मां भारती के इस पुत्र में अपना भरोसा प्रकट किया। मां भारती के इस समर्पित कर्म योगी का नाम है श्री नरेन्द्र दामोदर दास जी मोदी ।

श्री नरेन्द्र मोदी जी के मन में देश को संभालने संवारने सहेजने की परिकल्पना पहले ही से थी। वह "सब का साथ – सब का विकास" का उदघोष करते हुए देश को हर क्षेत्र में विकास की राह पर दृढ़ सकंल्प के साथ चल पड़े हैं। प्रारम्भ स्वच्छता अभियान से हुआ। यह वह विषय है जिस से हर वर्ग हर स्तर का व्यक्ति सम्बंध है। देश के प्रति सरोकार का एक परिवेश बना। स्वच्छता अभियान एक जन आन्दोलन बन गया है। मात गंगा की धारा को निर्मल अविचल प्रवाह मान बनाने के लिए "नमामि गंगे" की योजना शुरु को तथा उस के लिए एक अलग मन्त्रालय स्थापित किया। योजना समय बद्ध रूप से प्रगति पर है। संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में अपने पहले ही सम्बोधन में अतीत भारत की "योग विद्या" के महत्व से सारे संसार को परिचित कराया। संसार के सभी देश 21 जून को योग दिवस के रूप में मनाते हैं। महात्मा गांधी ने सत्य, अहिंसा के दर्शन को संसार के समक्ष रखकर भारत के स्वतन्त्रता संग्राम को जन आन्दोलन का रूप दिया था तथा सारे संसार का ध्यान इस ओर खींचा था। आज गांधी जी का जन्म दिन सारे संसार के देशों में अहिंसा दिवस के रूप में मनाया जाने लगा है। भारत वर्ष के अतीत का ज्ञान तथा वर्तमान का चिन्तन विश्व में मान पाने लगा है। आज हम गर्व से उदघोष कर सकते हैं। "गौरव शाली भारत की जय"

मोदी जी जनसामान्य के जीवन की कठिनाइयों के प्रति सजग तथा संवेदशील हैं। भारत वासियों का बड़ा भाग ग्रामवासी है। ग्राम वासियों में स्वतन्त्रता की बयार अभी तक नहीं पहुंची है। ग्रामवासियों के जीवन को सुखी तथा उन्नत करने के लिए अनेको योजनाएं तथा कार्यक्रम शुरु किए गए है। जैसे प्रधानमन्त्री ग्राम सड़क योजना, जन धन योजना, बैंक खाता योजना प्रधान मंत्री आवास योजना, ग्रामीणों की आय को दुगना करने का संकल्प प्रधान मंत्री सफल बीमा योजना, आदि।

नगरो के जीवन को समयानुकूल रूप देने के लिए समार्ट सिटी, अटल बीमा योजना, स्किल विकास, स्टार्ट अप, मेक इन इन्डिया आदि अनेक योजनाएं महिलाओं के प्रति सरकार विशेष सजग है। बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ का सामाजिक आदर्श इसी सजगता का घोतक है। महिलाओं की चिकित्सकीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए धन तथा हर प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था की गई है।

भारत जैसे विशाल देश में आवागमन के द्रुत गामी तथा सुरक्षित साधनों का विशेष महत्व है। सरकार जल, सड़क, रेल वायुयान के साधनो को आधुनिकतम तथा सुरक्षित रूप देने के लिए योजनाओं तथा विदेशी सहयोग पर पूरा ध्यान दे रही है।

भारत देश की विशाल समुद्री तट तथा विशाल भूसीमाएं हैं। इन सीमाओं पर चौकसी मे ढील के दुःखद परिणाम स्वतन्त्रता पश्चात भारत को झेलने पड़े थे। आज भारत अपनी रक्षा व्यवस्था पर पूर्णतः सजग है। भारत हर रक्षा सामग्री का उत्पादन अपने देश में कर रहा है। जल पोत, पनडुबियां, टैंक तोप, वायुयान सब आधुनिक तम स्तर के भारत में बन रहे हैं। आज भारत वासी एक सुरक्षित, वैभवशाली भारत का निर्माण करते हुए अतीत के गौरव तथा भविष्य के वैभव शाली भारत के विषय में पूर्णतः आश्वस्त हैं। आज हम कह सकते हैं।

गौरव शाली भारत की जय
वैभव शाली भारत की जय
भारत माता की जय ।।

– ऐ–4/443 पश्चिम विहार,
नई दिल्ली

महामहिम राष्ट्रपति जी के शपथ ग्रहण की सचित्र झलकियाँ

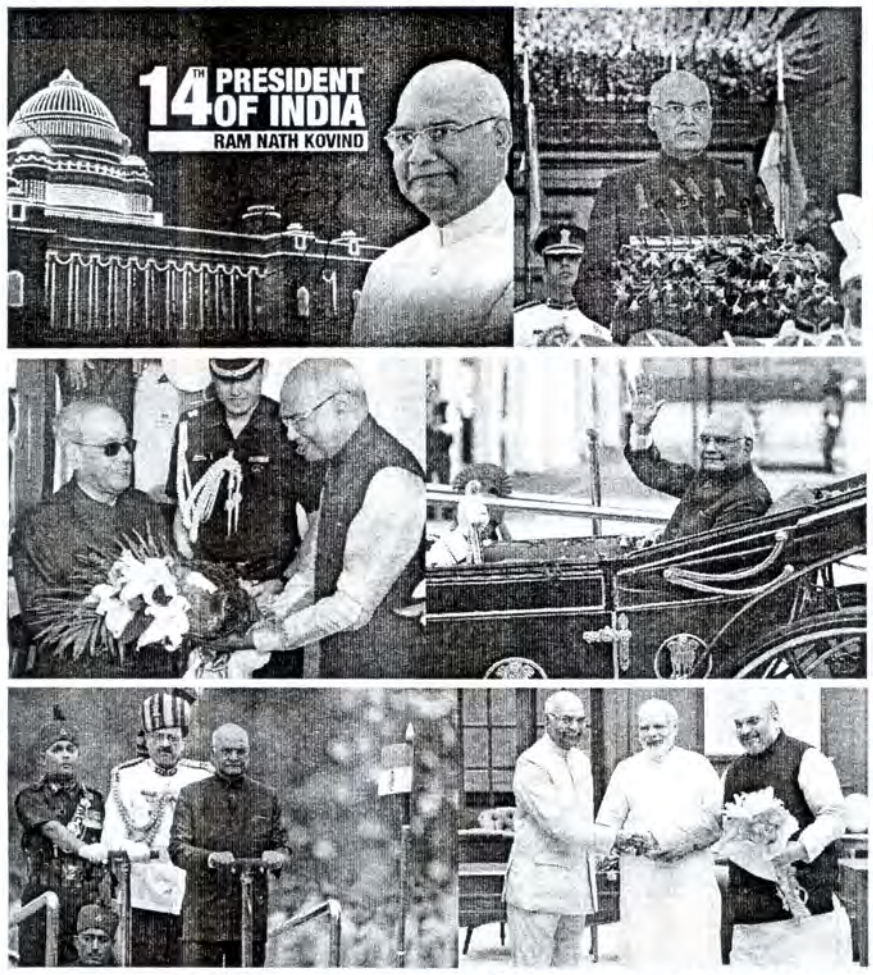

देश के 14वें राष्ट्रपति महामहिम श्री राम नाथ कोविन्द जी को भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा एवं शुद्धि समाचार की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ। हम सभी आपके मंगलमय जीवन व सुसमृद्ध राष्ट्र की कामना करते हैं।

विश्व वेद सम्मेलन

आपको यह जानकर अति प्रसन्नता होगी कि **दिनांक 24–4–2017 को आर्यसमाज डिफेन्स कॉलोनी में आयोजित आर्य विद्वानों की बैठक में निर्णय लिया गया कि आर्यसमाज की वैदिक विचारधारा को विश्व पटल पर प्रतिष्ठापित करने हेतु एक विश्व वेद सम्मेलन का अत्यन्त भव्य एवं प्रभावी रूप से आयोजन किया जाये।**

अभी तक वेदों को प्रायः धार्मिक कर्मकाण्ड से ही जोड़कर देखा जाता है जिससे उसकी सामाजिक उपयोगिता पर जन साधारण का ध्यान नहीं जाता है। उधर द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व शांति एवं विकास के लिए यू.एन.ओ. का गठन हुआ और 1948 में मानव अधिकार का घोषणा पत्र जारी हुआ यह बहुत कुछ वेद की मान्यताओं पर आधारित है। यूनेस्को ने ऋग्वेद को विश्व मानवता की प्राचीनतम धरोहर के रूप में स्वीकार किया। भारत के प्रधानमंत्री के रूप में इन्दिरा गांधी से लेकर नरेन्द्र भाई मोदी ने यू.एन.ओ. के पटल पर वेदों का संदर्भ दिया। अब उसी यू.एन. ने विश्व की 193 राष्ट्र राज्यों को 17 चुनौतियों–गरीबी, भुखमरी, बीमारी, अशिक्षा, जलवायु परिवर्तन, आर्थिक विशमता, जाति, लिंग, मत, पंथ व क्षेत्रियता आधारित भेदभाव, आदि को 2016 से शुरू कर 2030 तक पूरा करने का संकल्प पारित किया है। पेरिस में जलवायु संकट से उबरने के लिये 190 देशों ने इसी तरह का फैसला किया है।

हमारा विश्व वेद सम्मेलन इन सभी मुद्दों पर गंभीर विचार विमर्श–संगोष्ठी आयोजन कर अपना वैदिक घोषणा पत्र जारी करेगा।

अतः इस सम्मेलन के माध्यम से यह प्रयास होगा कि आज विश्व के सम्मुख विभिन्न चुनौतियों–समस्याओं के समाधान हेतु विद्वज्जन वैदिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करें।

यह सम्मेलन दिनांक 15, 16 व 17 दिसम्बर, 2017 को नई दिल्ली में होना प्रस्तावित है तथा इसे एक अभिनव रूप में आयोजित किया जायेगा।

डॉ. आनन्द कुमार पूर्व I.P.S.
– संयोजक, विश्व वेद सम्मेलन
मो. 9810764795

माह जुलाई 2017 के आर्थिक सहयोगी

आर्य समाज करोल बाग, नई दिल्ली	छः माह की सहायता	3000/–
श्री नरेन्द्र मोहन वलेचा जी, प्रधान, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री चतर सिंह नागर जी, महामंत्री, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री सुरेन्द्र गुप्त जी, कोषाध्यक्ष, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री विजय गुप्त जी आसुकवि, संरक्षक, शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री रणवीर सिंह जी, वरिष्ठ उपप्रधान, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्रीमती संतोष वधवा जी, मंत्री, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री शिवकुमार मदान जी, प्रतिष्ठित सदस्य, शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री ईश कुमार नारंग जी, उपप्रधान, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री राजेन्द्र कुमार दुर्गा जी, मंत्री, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
श्री वी. के. गुप्ता जी, प्रतिष्ठित सदस्य, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आजीवन सदस्यता शुल्क		2100/–
मेजर एस.पी. कोहली जी, अन्तरंग सदस्य, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, आ. सदस्यता शुल्क		2100/–
श्रीमती गीता झा जी, गुलमोहर एन्कलेव, दिल्ली	आजीवन सदस्यता शुल्क	2100/–
श्रीमती प्रेमलता भटनागर जी, नारायणा विहार, दिल्ली	आजीवन सदस्यता शुल्क	2100/–
आर्य समाज अनारकली, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली	मासिक	1000/–
बिग्रेडियर के.पी. गुप्ता जी, सैक्टर–15, फरीदाबाद	मासिक	1000/–
आर्य समाज साकेत, नई दिल्ली	मासिक	800/–
आर्य समाज इन्द्रा नगर, बगंलौर	मासिक	750/–
श्री चतर सिंह नागर जी, महामंत्री, शुद्धि सभा	मासिक	500/–
श्रीमती वासंती चौधरी जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	500/–
श्री शिव कुमार मदान जी, ट्रस्टी, जनकपुरी, नई दिल्ली	मासिक	200/–
श्रीमती राज सेठी जी, विजय नगर, दिल्ली	मासिक	100/–
श्रीमती सुशीला चावला जी, पीतमपुरा, दिल्ली	मासिक	100/–

श्रीमती कृष्णा दूबे जी द्वारा एकत्रित दान

श्रीमती वासन्ती चौधरी जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	500/–
श्रीमती कृष्णा दूबे जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	100/–
श्रीमती नीलम खुराना जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	100/–
श्री अर्पण हंस, पौत्र–श्रीमती नीलम खुराना जी, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
श्रीमती संतोष बहल जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	100/–
श्रीमती आशा रानी जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
श्रीमती प्रेम बजाज जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
श्रीमती अमरजीत कौर बिज जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
सुश्री मोना जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
बेबी स्वस्ति आर्या सुपुत्री डा. देवेश प्रकाश जी, आर्य महिला आश्रम	मासिक	100/–
श्रीमती विनीता ओरी जी, सुपुत्री श्रीमती कृष्णा दुबे जी, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
श्रीमती सुनीता कपिला जी, सुपुत्री श्रीमती कृष्णा दुबे जी, न्यू राजेन्द्र नगर		100/–
श्रीमती शोभा आचार्य जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर	मासिक	50/–
श्रीमती कैथरिन मैथ्यूज, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		50/–
श्रीमती निर्मल शर्मा जी, आर्य महिला आश्रम, न्यू राजेन्द्र नगर		50/–

श्रीमती सन्तोष वधवा जी (नारायणा विहार) द्वारा एकत्रित दान

श्रीमती इन्द्रा शर्मा जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	200/–
आचार्य श्याम देव जी शास्त्री, धर्माचार्य, आर्य समाज, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती आशा मुटरेजा जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती उर्वशी चावला जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती परमजीत जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती कृष्णा झाम्ब जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती सुमित्रा गुप्ता जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती प्रवेश बग्गा जी, नारायणा विहार, नई दिल्ली	100/–

श्री वी.के. गुप्ता जी (मुनिरिका विहार) द्वारा एकत्रित दान

श्रीमती मोहिनी चड्ढा जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती पुष्पा गुप्ता जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती रक्षा अग्रवाल जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती स्नेहलता गुप्ता जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती अरुणा वशिष्ठ जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती रवि गुप्ता जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती वीना कुमार जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती मन्जू गुप्ता जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–
श्रीमती उमा देवी जी, डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनिरिका, नई दिल्ली	100/–

R.N.I. No. 43084/76 Date of Publication 01-08-2017 (pages 8) Delhi Postal R.No. G-3/DL (N) 060/2015-17
Posting Date : 2-3 Every Month

सेवा में,

शुद्धि समाचार
अगस्त – 2017

श्रेष्ठ जीवन में सत्संग की महिमा

–भूदेव शास्त्री

आर्य जीवन के लिए यह सबसे अधिक जरुरी है कि आप सत्संग में जायें और वहां जाकर पीठ की बातें, जो बातें पीठ से होती हैं। उन बातों को बहुत ही शान्ति और धैर्य के साथ स्थिर मन होकर सुनें। सारी बातें सुनने से शुद्ध होती है। सत्संग में कभी गये नहीं। गये भी तो पीठ की बातें नहीं सुनी। विचार कीजिये, कैसे बात बन सकती है। जब तक हम आर्य लोग सत्संग में जाते रहे और पीठ की बातें सुनते रहे हम आर्य रहे। हमारे द्वारा बड़ा काम हुआ। हमारे जीवन ऐसे रहे कि हमारे विरोधी भी हमारे जीवन मुग्ध रहे और भगवान से प्रार्थना करते रहे कि प्रभु! हमारा जीवन भी ऐसा हो। जीवन ही नहीं वे मौत भी हमारे जैसी मांगते थे। आपको याद होगा महात्मा गांधी ने ईश्वर से प्रार्थना की थी मेरी मृत्यु ऐसी हो कि जैसी स्वामी श्रद्धानन्द की हुई है। आर्यजन! अंग्रेज भारत से जाने वाले नहीं थे। सत्ता का सुख किसे अच्छा नहीं लगता वैसे ही जाल बिछाते रहे कि जिससे भारत की शासन सत्ता पर उनकी गहरी पकड़ बनी रहे। इसी प्रकार रहमत अली गूजर और मुहम्मद अली जिन्ना आदि अपने जाल बिछाने की जुगत में थे। इनकी योजनाऐं अत्यन्त घातक थीं। वह भारत से युगों–युगों पुरानी और सनातन काल से चली आती भारतीयता था समूल उच्छेद करके भारत को पूरी तरह इस्लाम अर्थात् इस्लामिक स्टेट बना देना चाहते थे। यह लोग चाहते थे, अंग्रेजों के जाते ही भारत के शासन की नकेल इनके हाथ में आ जाय। उधर हैदराबाद का नबाब अपने ही सपने देखता था, इसे हैदराबाद अपने लिए एक अलग और स्वतंत्र देश चाहिये था। इन सबका उच्छेद इतना आसान नहीं था। परन्तु भारत का इतिहास साक्षी है कि यह सब आपके कारण सम्भव हुआ। आप सब सत्संग में जाते थे। वहां पीठ की बातें सुनते थे और सुनते–सुनते आपका जीवन आर्य बनता चला जाता था। आप स्वयं सन्ध्या, हवन, स्वाध्याय, संस्कार, सेवा और सत्संग आदि के प्रति, समर्पित होने लगते थे। अंग्रेज, ईसाई, मुसलमान आदि जो भी आपके विरोधी थे, वे सब हैरान होते थे। आर्यों में इतनी बुद्धिमत्ता और ऊर्जा का अंततः संचार होता कैसे है। कम्यूनिष्ट सोच नहीं पाते थे, कि आर्य यह कर कैसे पाते हैं। एक आर्य का जीवन साधारण जीवन नहीं होता। उसकी पूरी दिनचर्या कसी हुई होती है। उसमें मृत्यु भी व्यवधान नहीं ड़ाल सकती। अमर शहीद रामप्रसाद विस्मिल को जिस दिन फांसी हुई, वे उस दिन भी और दिनों की तरह प्रातः काल ब्राह्म मुहूर्त में जागे, शौचादि गये। कुल्ला, दांतुन किया। व्यायाम किया। सन्ध्या और हवन किया। स्वाध्याय किया फिर जब, फांसी का समय आया तो एक दम निडर भाव से फांसी के फन्दे की ओर चल पड़े। 'सर फरोसी की तमन्ना अब हमारे दिल मैं है। देखना है जोर कितना बाजु–ए– कातिल में है।' यह सब गीत विस्मिल के ही हैं। सत्संग हम आर्यों की विशेषता थी। यह वह मूल स्रोत था जहां से एक साधारण व्यक्ति भी एक असाधारण महामानव तैयार होकर निकलता था। आज भी इनके सत्संग में वह विशेषता ही हमारा सत्संग एक व्यक्ति पर आधारित नहीं होता। इस लिये आप हमारे सत्संग में वह हुए भी न पायेंगे जो चीज गुरुकुल तैयार करती है। हमारे सत्संग में सबको बोलने की स्वतंत्रता है और सबको अपने ढंग से समझने की स्वतंत्रता है। हमारे सत्संग का मूल उद्देश्य है सत्यार्थ प्रकाश। उस सत्य को प्रकाशित करना जो सत्य है। इसलिये हमारे सत्संग में एक अगर गलत बोलता है तो दूसरा तत्काल उसको सुधारता है। हमारी मूल अवधारणा है किसी भी चीज का आधार सम्बन्ध चीज के लक्षण और प्रमाण होते हैं। किसी ने कह दिया और हो गया। ऐसा नहीं होता। ऐसा हो ही नहीं सकता। हम वेद की बात भी बिना तर्क के नहीं स्वीकार करते। हमारे लिये नहीं धर्म है जिसकी खोज तर्क से होती है। बहनों और भाइयों, आज हमारा देश और समाज घोर संकट में है। कुछ लोग गला फाड़–फाड़कर चीख रहे हैं यह देश किसी के बाप का नहीं है। अभी वह दावा कर रहे है यह देश हमारा भी है। परन्तु थोड़ी देर बाद ही वह पाशा पलटते हैं यह देश हमारा ही है। आप सभी को इस सब पर विचार करना होगा। आप सबको विचार करना चाहिये यह देश किसका है और किसके बाप का है। कौन कहां से आया है। किसके अन्दर मचलती हुई जुनून बती विचार धारा कहां से आई है। सन्तान दो तरह की होती है एक माता–पिता से पैदा और दूसरी विचारों से पैदा। संस्कृति सभ्यता, सदाचार, देश और समाज के मामले में शरीर से अधिक विचारों का महत्व है। क्योंकि व्यक्ति की क्रिया और प्रतिक्रियायें सब विचार के आधार पर चलती है।

शेष पृष्ठ 1 का...

अतः वेदों व वेदों के व्याख्या ग्रन्थों का स्वाध्याय व उनका जीवन में आचरण ही ऋषि तर्पण है। यह ऋषि तर्पण इस लिए कहलाता है कि इससे हम ऋषि ऋण से मुक्त होते हैं। वेदों का स्वाध्याय व अध्ययन जितना अधिक होगा उतना वैदिक धर्म व संस्कृति उन्नत व समृद्ध होगी। स्वाध्याय वा ऋषि तर्पण का यह क्रम लगभग साढ़े चार मास चलता है जिसका आरम्भ उपाकर्म से और समापन उत्सर्जन से होता है। इस विषय में अधिक जानने के लिए आर्य विद्वान पं. भवानी प्रसाद लिखित **'आर्य पर्व पद्धति'** का अध्ययन आवश्यक है।

वेद और यज्ञ का परस्पर गहरा सम्बन्ध है। सभी यज्ञ वेद मन्त्रों के पाठ व वेद मंत्रों में निहित विधियों के द्वारा ही होते हैं। अतः श्रावण मास में यज्ञों को नियम पूर्वक करना चाहिये। यज्ञ से हानिकारक किटाणुओं का नाश होता है। वायु की दुर्गन्ध का नाश होकर वायु सुगन्धित हो जाती है जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती है। अनेक प्रकार के रोग नियमित यज्ञ करने से दूर हो जाते हैं और यज्ञ करने से अधिकांश साध्य व असाध्य रोगों से बचाव भी होता है। यज्ञ के प्रभाव से निवास स्थान व घर के भीतर की वायु यज्ञाग्नि की गर्मी से हल्की होकर बाहर चली जाती है और बाहर की शीतल व शुद्ध वायु घर के भीतर प्रवेश करती है जो स्वास्थ्यप्रद होती है। वायु में गोघृत व वनौशधियों सहित मिष्ट व पुष्टिकारक पदार्थों की आहुतियां देने से उस वायु का लाभ न केवल यज्ञकर्ता को होता है अपितु वह वायु दूर दूर तक जाकर असंख्य लोगों को लाभ पहुंचाती है। जितने लोग लाभान्वित होते हैं उसका पुण्य भी यज्ञकर्ता को मिलता है। यज्ञ में वेदमन्त्रों को बोलकर आहुति देने से मन्त्र में निहित ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित उसके अर्थों को जानकर उसके अनेक आध्यात्मिक व भौतिक लाभ भी यज्ञ करने वाले मनुष्य को प्राप्त होते हैं। इससे वेदों की रक्षा भी होती है। इसी कारण वैदिक धर्म में प्रत्येक पर्व पर यज्ञ करने का विधान है जिससे यह सभी लाभ यज्ञ कर्ता व उसमें उपस्थित लोगों सहित पड़ोसियों व दूर देशवासियों को भी प्राप्त हो सकें। श्रावणी के दिन विशेष पर्व पद्धति के अनुसार यज्ञ आयोजित कर इसका लाभ सभी गृहस्थियों को उठाना चाहिये।

श्रावणी पर्व श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। हम अपने अनुभव के आधार पर कहना चाहते हैं कि श्रावण मास से आरम्भ कर चार व साढ़े मास तक वैदिक साहित्य का अध्ययन वा स्वाध्याय करना चाहिये, इससे वर्तमान व शेष जीवन सहित परजन्म में भी लाभ होता है, ऐसा सत्शास्त्र बताते हैं। इसके लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाश्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय का अध्ययन कर ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेद व यजुर्वेद भाष्य का स्वाध्याय करना चाहिये। ऋग्वेद के अवशिष्ट भाग व अन्य वेदों पर आर्य विद्वानों के भाष्य का अध्ययन करना जीवन में अभ्युदय व निःश्रेयस में अग्रसर करता है। आर्य विद्वानों स्वाध्याय के लिए अनेक ग्रन्थों की रचना की है जिसके अध्ययन से मनुष्य निर्भ्रान्त स्थिति का लाभ प्राप्त करता है। यही जीवन का उद्देश्य भी है। इन्हीं शब्दों के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

फोन:09412985121

मुद्रक, व प्रकाशक – रामनाथ सहगल द्वारा गुरमत प्रिंटिंग प्रेस, 1337, संगतरासन, पहाड़ गंज, नई दिल्ली–55 दूरभाष : 23561625, से मुद्रित एवं भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, 6949, बिड़ला लाइन दिल्ली–7 दूरभाष : 23857244 से प्रकाशित। सम्पादक : आचार्य गवेन्द्र शास्त्री, सह–सम्पादकः डॉ. देवेश प्रकाश आर्य